पंचम अध्याय

उपासकदशाङ्गसूत्र में प्रतिबिम्बित समाज एवं संस्कृति

(क) वर्णाश्रम व्यवस्था

यद्यपि उपासकदशाङ्गसूत्र श्रावकों के यद्यपि उपासकदशाङ्गसूत्र श्रावकों के आचार-विचार का वर्णन करता है फिर भी इसमें वर्ण-व्यवस्था के विषय में भी कतिपय प्रसङ्ग दृष्टिगोचर होते हैं।

इसमें आर्य-अनार्य जाति एवं चारों वर्णों के व्यक्तियों का जीवन परिचय उपलब्ध होता है।

उस समय आर्य-अनार्य यही मुख्य रूप से दो प्रकार की जातियाँ होती थीं। उपासकदशाङ्गसूत्र में सुधर्मा स्वामी को अज्ज सुहम्मे[1] शब्द से सम्बोधित किया गया है। आर्य शब्द की परिभाषा बतलाते हुए कहा गया है कि 'जो अपने देश के नियम और धर्म के प्रति निष्ठावान् है वही आर्य है'-

कर्त्तव्यमाचरन् कार्यमकर्त्तव्यमनाचरन्।
तिष्ठति प्रकृताचारे स वा आर्य इति स्मृतः।।[2]

प्रश्नव्याकरण[3] और प्रज्ञापनासूत्र[4] में भी आर्य-अनार्य के भेद तथा उनके कार्यों को स्पष्ट किया गया है। यहाँ आर्य-अनार्य के सम्बन्ध में यह बतलाया गया है कि आर्य विजेता और गौरवर्ण वाले होते हैं और अनार्य उनके अधीन रहने वाले तथा कृष्णवर्ण के होते हैं।[5] उपासकदशाङ्गसूत्र में भी गणधर जम्बुस्वामी आर्य-अनार्य इन दो जातियों की उपस्थिति बतलाते हैं कि भगवान् द्वारा प्रतिपादित अर्द्धमागधी भाषा सभी आर्यों और अनार्यों की भाषा में परिणत हो गई।[6] इस वर्णन से यह सिद्ध होता

1. उपा०सू० 1/5
2. संस्कृत हिन्दी कोष, पृ० 156
3. प्रश्न-1/1/21
4. प्रज्ञा०सू० 1/67
5. जैन आ०सा०भा०स०, पृ० 221
6. उपा०सू० 2/11

है कि उपासकदशाङ्गसूत्र के समकालीन समाज व राष्ट्र उच्च और निम्न इन दो श्रेणियों में विभक्त था फिर भी समाज में चतुर्विध आश्रम और वर्णव्यवस्था विद्यमान थी।

वर्णव्यवस्था के अन्तर्गत उपासकदशांगसूत्र में चारों वर्णों के व्यक्ति मिलते हैं। इनमें ब्राह्मणों का आदरणीय स्थान था कारण यह कि आगम साहित्य में अनेक स्थलों पर श्रमण और ब्राह्मण पद का प्रयोग एक साथ मिलता है।[1] उपासकदशाङ्गसूत्र के प्रस्तुतकर्त्ता पांचवें गणधर सुधर्मा स्वामी और आनन्द श्रावक से क्षमायाचना करने वाले चार ज्ञान के धारी, लब्धियों के धनी प्रथम गणधर गौतम स्वामी भी ब्राह्मण कुल में ही उत्पन्न हुए थे।

वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मण वर्ग के बाद क्षत्रिय आते हैं, परन्तु जैनधर्म ब्राह्मणों की अपेक्षा क्षत्रियों को श्रेष्ठता प्रदान की गई है। सभी तीर्थंकर क्षत्रिय कुल में उत्पन्न होते हैं।[2] वे 72 कलाओं का विधिवत् अध्ययन करते हैं और सर्वशक्तिमान होते हैं। उपासकदशांगसूत्र के प्रथम अध्ययन में आनन्द श्रावक सर्वव्रती दीक्षा अंगीकृत करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए कहते हैं कि हे देवानुप्रिय! आपके पास जिस प्रकार राजा, ईश्वर, तल्वर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह मुण्डित होकर घर छोड़कर मुनि बने हैं, किन्तु मैं उस प्रकार मुण्डित एवं प्रवर्जित होने में समर्थ नहीं हूँ।[3] इसमें आए राजा, ईश्वर, तल्वर, माडम्बिक व सेनापति शब्द–क्षत्रिय वर्ग के द्योतक हैं। क्षत्रिय संसार त्यागकर सिद्धिपथ के पथिक भी बन जाते थे।

उपासकदशांगसूत्र में वैश्य के लिये गाथापति शब्द प्रयुक्त हुआ है। ये लोग बहुत सम्पन्न होते थे, करोड़ों की सम्पत्ति के मालिक होते थे। ये खेती और व्यापार करते थे। यहा आनन्द कामदेव आदि श्रावकों को गाथापति की संज्ञा दी गई है।[4] मिट्टी के बर्तनों का व्यापार करने वाले कुम्हार कहलाते थे, सद्दालपुत्र के साथ कुम्हार शब्द प्रयुक्त मिलता है।[5]

अन्तिम वर्ण शूद्र के अन्तर्गत मजदूर, सेवक, दास आदि प्रत्यक्ष रूप में हमें उपासकदशांगसूत्र में दृष्टिगत होते है। आनन्द आदि श्रावकों का इतना बड़ा व्यापार था, जिसमें इन लोगों का महत्त्वपूर्ण सहयोग था।[6]

1. आव०चू०, पृ० 3
2. कल्प०सू० 2/17
3. उपा०सू० 1/12
4. वही, 1/3, 2/90, 3/123, 4/148, 5/155, 6/163, 8/228, 9/265, 10/269
5. वही, 7/178
6. उपा०सू० 1/3

(ख) पारिवारिक जीवन

उपाकसदशांगसूत्र में श्रावकों का उल्लेख होने से उनके पारिवारिक जनों, पारिवारिक जीवन का विशद् एवं सुन्दर चित्र प्रस्तुत किया गया है। उपासकदशांगसूत्र के दशों श्रावकों का भरा-पूरा परिवार था। आनन्द श्रावक की प्रशंसा एवं उनके विशाल पारिवारिक जनों का परिचय देते हुए यहाँ कहा गया है कि 'आनन्द श्रावक कोल्लाक सन्निवेश में अनेक मित्र, ज्ञातिजन, माता-पिता, स्वजन-बन्धु-बान्धव आदि, सम्बन्धी और परिजनों के साथ निवास करता था।[1]

संयुक्त परिवार प्रथा

समाज में उस समय संयुक्त परिवार प्रथा थी। पिता घर का मुखिया व स्वामी होता था। सभी लोग उसकी आज्ञा का पालन करते थे। वह उनके लिये आधारभूत होता था। उपासकदशांगसूत्र में भी आनन्द श्रावक के प्रकरण में आनन्द के विषय में बतलाया गया है कि वह कुटुम्बिजनों का आधारभूत था, उनका पथप्रदर्शक एवं वह केन्द्र स्तम्भ भी था।[2]

1. पत्नी

उपाकसदशांगसूत्र में दशों श्रावकों के साथ उनकी पत्नियों का भी उल्लेख मिलता है। आनन्द श्रावक की शिवानन्दा नामक पत्नी पति में अनुरक्त एवं अविरक्त थी और आनन्द को भी बहुत प्रिय थी।[3] उसने एवं सद्दालपुत्र की पत्नी अग्निमित्राभार्या ने पति द्वारा प्रेरित करने पर भगवान् महावीर स्वामी से श्रावक व्रत अंगीकृत किये थे।[4]

2. पत्नी-सम्मान

श्रावक लोग पत्नी का बहुत सम्मान करते थे। इस सन्दर्भ में हम सद्दालपुत्र के प्रसंग को देखते हैं कि जब सद्दालपुत्र धर्माराधना में संलग्न था, तो एक देव ने परीक्षार्थ सद्दालपुत्र को कहा–तुम अपना व्रत भंग कर लो, अगर तुम ऐसा नहीं करोगे, तो मैं तुम्हारी धर्म-सहायिका, धर्म-वैद्या, धर्म-अद्वितीया, धर्म-अनुरागरता,

1. उपा०सू० 1/8
2. उपा०सू० 1/5
3. वही, 1/6
4. वही, 1/58, 7/207

सम सुख-दुःख सहायिका तुम्हारी पत्नी अग्निमित्रा को घर से ले आऊँगा और तुम्हारे आगे उसकी हत्या करूंगा।[1] यह सुनकर वह विचलित हो जाता है।

यहाँ भगवान् महावीर का वाक्य उद्धृत किया जाता है-श्रावक ने पत्नी का अपमान किया था, तो उसे क्षमा याचना हेतु प्रेरित करते हैं।

3. बहु पत्नी प्रथा

उपासकदशांगसूत्र की रचना कालीन समाज में बहुपत्नी प्रथा समृद्धि की पहचान थी। पैसे वाले व्यक्ति इस बहुपत्नी प्रथा को धन, सम्पत्ति, यश एवं गौरव का कारण मानते थे। प्रस्तुत सूत्र में अष्टम् अध्ययन में महाशतक श्रावक की रेवती आदि तेरह पत्नियाँ थीं, सभी सर्वाङ्गसुन्दरी थीं।[2]

4. दहेज

विवाह के अवसर पर कन्या पक्ष की तरफ से दिया जाने वाला धन एवं उपयोगी वस्तुएँ दहेज कहलाती हैं। राजकन्याओं और श्रेष्ठी कन्याओं के विवाह में घोड़े, हाथी, धन आदि दहेज में दिए जाते थे। राजगृह के गृहपति महाशतक की रेवती आदि 13 पत्नियाँ थीं। उनमें रेवती अपने पीहर (पिता के घर) से आठ कोटि हिरण्य और आठ व्रज गायों को लेकर आयी थी। बाकी बारह पत्नियों के पास उनके पीहर से प्राप्त एक-एक करोड़ स्वर्ण मुद्राएँ तथा दश-दश हजार गायों का एक-एक गोकुल व्यक्तिगत सम्पत्ति के रूप में था।[3] हर पत्नी अपने दहेज की स्वामिनी होती थी। इससे सिद्ध होता है कि उस समय भी विवाह आदि रस्मों में धन सम्पत्ति दी जाती थी।

5. सौतों के प्रति द्वेष

बहुपत्नी प्रथा के कारण राजाओं एवं समृद्ध व्यक्तियों की बहुत पत्नियाँ होती थीं। उनमें परस्पर ईर्ष्या होनी स्वाभाविक थी। वे एक दूसरे से द्वेष करती थीं और उन्हें नीचा दिखाने को तैयार रहती थीं। परस्पर में एक दूसरी को नीचा दिखाने के लिये वे षडयन्त्र भी रचती थीं। कभी-कभी परस्पर इतना द्वेष बढ़ जाता था कि वे अपनी सौतों को मृत्यु के घाट भी उतार देती थीं।

1. उपा०सू०, 7/123
2. वही, 8/229
3. वही, 8/234

उपासकदशांगसूत्र में महाशतक श्रावक की पत्नी रेवती ने यह विचार किया कि 'यदि मैं अपने पति के साथ विपुल विषय भोग भोगना चाहती हूँ, तो अपनी 12 सौतों को अग्नि, विष या शस्त्र प्रयोग द्वारा वध कर दूँ।' इस प्रकार विचार करके उसने अपनी 12 सौतों में से छह को शस्त्र प्रयोग एवं छह को विष प्रयोग द्वारा मार डाला था।[1]

6. ज्येष्ठ पुत्र का उत्तरदायित्व

पुत्र पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होता है। उपासकदशांगसूत्र में वर्णन आता है कि प्रत्येक श्रावक के मन में धर्माराधना करते हुए विचार उत्पन्न हुआ कि अब मुझे सामाजिक और लौकिक दायित्वों से मुक्त होकर अपना जीवन धर्म की राह पर लगाना चाहिये, यह निश्चय कर वह सब प्रकार का उत्तरदायित्व एवं सम्पत्ति अपने ज्येष्ठ पुत्र को सौंपकर साधु जैसा जीवन जीने को उद्यत हो गए।[2]

7. पुत्र का माता-पिता से स्नेह

जहाँ माता-पिता का पुत्र के साथ स्वाभाविक स्नेह होता है, वहाँ पुत्र की भी माता-पिता के प्रति अनन्य श्रद्धा होती थी। उपासकदशांगसूत्र में चूलनीपति श्रावक के पास एक देव व्रत भंग करने के उद्देश्य से समुपस्थित हुआ। उसके कहने पर कि मैं तुम्हारे पुत्रों का वध कर दूंगा, चुलनीपिता विचलित नहीं हुए परन्तु देव ने जब उन्हें माता के वध की धमकी दी, तो चुलनीपिता ने विचार किया कि यह देव मेतारी माता को जो देवता और गुरु के समान पूज्यनीय है, जिसने मेरे भयंकर कष्ट उठाए हैं, मेरे सामने लाकर मार डालना चाहता है। अतः यही उचित है कि मै इसको पकड़ लूं।[3] इस प्रकार उसकी मातृभक्ति प्रशंसनीय है।

8. स्वजन सम्बन्धी

उपासकदशांगसूत्र में स्वजन-सम्बन्धियों का बड़े सम्मान से उल्लेख मिलता है। व्यक्ति समाज में रहता है। समाज में रहते हुए स्वजन सम्बन्धी उसके लिये सहायक रूप होते हैं। परस्पर सौहार्द होने से विशिष्ट अवसरों पर उन्हें निमन्त्रित भी किया जाता था। आनन्द श्रावक ने शीलव्रत आदि का चौदह वर्ष पालन किया। 15वें

1. उपा०सू०, 8/235
2. वही, 1/63
3. उपा०सू० 3/134

वर्ष मन में विचार आया कि अपने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब का भार सौंपकर स्वयं निवृत्त हो जाऊँ, तो उन्होंने सोचा कि विपुल मात्रा में आहार बनवाकर मित्र, कुटुम्बिजन, स्वजन एवं परिजनों को भोजन करवाकर मित्रों और ज्येष्ठपुत्र की अनुमति प्राप्त कर पौषधशाला में रहकर स्वीकृत धर्मप्रज्ञप्ति का यथाविधि पालन करूँ।[1] इस प्रकार स्वजन-सम्बंधियों की आज्ञा लेकर आनन्द एवं अन्य श्रावक पौषधशला में जाते थे।

(ग) नारी का स्थान

श्रमण परम्परा में भगवान् ऋषभदेव से लेकर चरम तीर्थंकर भगवान् महावीर तक नारी का गौरवपूर्ण स्थान रहा है।

उपासकदशांगसूत्र में नारी के दो रूप मिलते हैं–एक तरफ श्रमण भगवान् महावीर ने उसे धर्म वैद्या, धर्म सहायिका, धर्मानुरागरत्ता आदि सम्मानों से मण्डित किया है।[2] वहीं दूसरी तरफ हम श्रावक महाशतक की पत्नी रेवती को पाते हैं, जो मद्य-मांस सेवी एवं विषय वासनाओं में अनुरक्त थी।[3] एक तरफ शिवानन्दा एवं अग्निमित्रा जैसी नारियाँ हैं, जो पति के पथ का अनुगमन करने में गौरवान्वित होती हैं तो दूसरी तरफ रेवती जैसी नारियाँ हैं जो पति को सत्पथ से विचलित करना चाहती थीं।[4]

(घ) दास प्रथा

उपासकदशांगसूत्र का अध्ययन करने पर हमें ज्ञान होता है कि उस समय भारत में दास प्रथा का भी प्रचलन था। यहाँ अनर्थादण्ड के अन्तर्गत 15 कर्मादानों का उल्लेख मिलता है। इसमें दसवां कर्मादान केश वाणिज्य है। केश वाणिज्य में गाय, भैंस, बकरी, भेड़, घोड़े आदि जीवित प्राणियों की खरीद-बिक्री के साथ-साथ दास दासियों की खरीद-बिक्री का धन्धा भी शमिल था। सम्पत्ति में चतुष्पद प्राणियों के साथ-साथ द्विपद प्राणियों की भी गिनती होती थी। द्विपदों में मुख्यतः दास-दासी आते थे।

1. उपा०सू०, 1/63
2. वही, 7/223
3. वही, 7/235
4. वही, 7/242

(ङ) शासन-व्यवस्थो

राजा एवं उसके अधीनस्थ पुरुष

आज की युग की भाँति उस समय प्रजातन्त्र नहीं था। उपासकदशांगसूत्र के अनुसार प्रत्येक नगरी का एक राजा था, जो कि प्रजा का पालन करता था। प्रजा के सुख-दुःख में काम आना राजा का प्रथम कर्त्तव्य था।

उपासकदशांगसूत्र में वर्णित है कि वाणिज्यग्राम, चम्पानगरी, वाराणसी, आलम्भिका, काम्पिल्यपुर और पोलासपुर में राजा जितशत्रु का शासन था।[1] राजगृह नगरी का राजा श्रेणिक था।[2] श्रावस्ती में भी जितशत्रु का राजा का ही राज्य था।[3] सभी राजा गण श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का पर्दापण सुनकर उनके दर्शन करने एवं प्रवचन सुनने उनके समवशरण में गये थे।

राज्य में राजा की सहायता करने वाले पुरुष राजा के प्रधानपुरुष कहलाते हैं। उपासकदशांगसूत्र में आनन्द श्रावक श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का पावन उपदेश सुनकर कहता है कि हे भगवन्! जिस प्रकार आपके पास अनेक राजा, ऐश्वर्यशाली, तलवर, मांडविक, कौटुम्बिक, श्रेष्ठी, सेनापति एवं साथर्वा अनगार के रूप में प्रव्रजित हुए हैं, मैं उसी प्रकार मुंडित होकर प्रव्रजित होने में असमर्थ हूँ।[4] उपर्युक्त सभी शब्द राजा के प्रधान पुरुष की ओर ही इंगित करते हैं।

(च) न्याय व्यवस्था

उपासकदशांगसूत्र कालीन समाज में दो प्रकार की राज्य व्यवस्था थी–एक राजतन्त्र एवं दूसरी प्रजातन्त्र।

छोटी-छोटी बातों का मामला राजदरबार में लाया जाता था और राजा हर झगड़े का निर्णय करता था। अन्य जैन आगमों में भी राजा द्वारा चोर को सजा देने का वर्णन प्राप्त होता है।[5] उस समय कई लोग झूठी गवाही देते थे और झूठे दस्तावेज तैयार करते थे। इसलिये श्रावकों को आदेश दिया गया था कि झूठे लेख और झूठी गवाही देना अतिचार है, ऐसा नहीं करना चाहिये।[6]

1. उपा०सू० 1/3, 2/90, 3/122, 4/148, 5/155, 6/163, 7/178
2. वही, 8/229
3. वही, 9/261, 10/271
4. वही, 1/12
5. विपाकसू० 2/22
6. उपा०सू० 1/42

1. अपराधी

चोर द्वारा चुराई वस्तु लेने वाले, राज्य के विरुद्ध षड्यन्त्र करने वाले, कम माप तोल करने वाले को अपराधियों की श्रेणी में रखा जाता था।[1] इस से पता चलता है कि उस समय आर्थिक अपराध अधिक रहे होंगे। इन अपराधियों में रिश्वतखोर, बदमाश चोर और जबरन चोरी करने वाले अपराधी भी शामिल हैं। अन्य अपराधों में जहाज लूटने वाले, स्त्री-पुरुष का अपहरण करने वालों के उल्लेख भी आगमों में मिलते हैं।[2] चोरी करने के साथ-साथ चोरी की सलाह देने वाले, चुराई वस्तु को कम मूल्य पर खरीदने वाले, चोरों को आश्रय देने वाले को अपराधियों की संज्ञा दी गई है।[3]

2. दण्ड व्यवस्था

संकेत रूप से ज्ञात होता है कि उस समय न्याय व्यवस्था अच्छी रही होगी। दण्ड क रूप में वध तक करने का विधान आगमों में उपलब्ध है।[4] कई मामलों में अङ्ग-छेदन का उल्लेख भी है क्योंकि श्रावक के अतिचारों में इस बात की मनाही की है।[5] इसके अतिरिक्त कल्पसूत्र में कैदियों को जेलखाने में रखने का विधान भी प्राप्त होता है क्योंकि जब भगवान् का जन्म हुआ, सभी कैदियों को मुक्त कर दिया गया था।[6]

(छ) व्यापार एवं अन्य कार्य

धन कमाने के लिये किया जानो वाला कार्य व्यापार कहलाता है। उपासकदशांगसूत्र में श्रावकों का उल्लेख किया है, जो कि धन कमाकर अपने पारिवारिक जनों का भरण-पोषण करते थे। उस समय कौन-कौन से व्यापार प्रचलित थे, इसकी सूचना अनर्थदण्डव्रत के अन्तर्गत श्रावक के लिये वर्जित पन्द्रह कर्मादानों में दी गई है जिसमें खनिज व्यापार, हाथी दांत का व्यापार, लाख एवं विष का व्यापार उल्लेखनीय है।[7]

1. उपा०सू०, 1/43
2. ज्ञाता०सू० 18, पृ० 468
3. प्रश्न०सू० 3/32
4. विपाक सू० 3/31
5. उपा०सू० 1/41
6. कल्प सू०, पृ० 67
7. उपा०सू० 1/47

सातवें अध्ययन में सद्दालपुत्र का वर्णन आता है, उसका मुख्य व्यापार मिट्टी के बर्तन तैयार करना और बेचना था। वहाँ उसकी कर्मशालाओं में आटा और दही जमाने के काम में आने वाली परातें, घड़े, कलसे, छोटे घड़े, बड़े मटके, सुराहियां और तेल, घी आदि रखने में प्रयुक्त लम्बी गर्दन और बड़े पेट वाले कूपे बनाए जाते थे और उन्हें सड़क पर अवस्थित कर बेचा जाता था।[1]

समाज के अन्य लोग जरूरत के अनुसार विभिन्न प्रकरा के कार्य करते थे जिनमें लुहारगिरी[2] बढ़ईगिरी कर्मकार एवं रंगने के कार्य[3] आदि का उल्लेख मिलता है।

इससे स्पष्ट है कि भारतीय व्यापारी अपनी कला में दक्ष थे, व्यापार में निपुण थे, वे अपना सामान लेकर विदेश भी जाया करते थे। चम्पानगरी का वणिक व्यापार के लिये पिंहड नगर भेजा गया था।[4]

उस समय व्यापारो व्यापार में कई प्रकार के छल-कपट करते थे, कर चोरी भी करते थे। इसलिये आनन्द श्रावक के प्रकरण में व्यापारी को इन बातों की मनाही की गई है।[5]

(ज) कृषि कर्म

उस समय कृषि कर्म भी किया जाता था। उपासकदशांगसूत्र में आनन्द श्रावक ने परिग्रह परिमाणव्रत के अन्तर्गत क्षेत्र-वास्तु के परिमाण में पाँच सौ हलों[6] के सिवाय शेष क्षेत्रवास्तु का प्रत्याख्यान किया था।[7] इन पाँच सौ हलों की भूमि में कृषि-कर्म किया जाता रहा होगा। सूत्र में 'नियत्तण सइएणं' शब्द प्रयुक्त हुआ है। निवर्तन का अर्थ है-हल चलाते समय बैलों का मुड़ना। कृषि कर्म करते समय ही हल चलाने की आवश्यकता होती है, पन्द्रह कर्मादानों में स्फोटन कर्म का भी उल्लेख है, जो खेतों में हल चलाने से सम्बन्धित है। अतः स्पष्ट है कि प्राचीन काल में विभिन्न कर्म व्यापार क मुख्य अंग था।

1. उपा०सू०, 7/182
2. उत्तरा० 19/66
3. ज्ञाता०सू० 1
4. उत्तरा० 21/2
5. उपा० 1/43
6. सौ बीघा भूमि का एक हल होता है।
7. उपा०सू० 1/19

(झ) पशुपालन

तत्कालीन भारत में पशुधन सम्पत्ति का मुख्य अङ्ग थे। गाय, दूध, दही, घी, मक्खन आदि के रूप में सात्त्विक एवं पौष्टिक भोजन प्रदान करती थी और बैल यात्रा एवं परिवहन के कार्य में प्रयुक्त किये जाते थे और वे व्यापार का मुख्य अङ्ग थे।

उपासकदशांगसूत्र में आनन्द श्रावक के पास चार व्रज थे, प्रत्येक व्रज में दस हजार गायें थीं[1] गाय शब्द समस्त पशुधन के लिये लिया गया है। कामदेव श्रावक के पास छह व्रज, चुलनी पिता के पास आठ व्रज, सुरादेव के पास छह व्रज, चुल्लशतक, कुण्डकौडिक के पास छह व्रज, सद्दालपुत्र के पास एक व्रज, महाशतक के पास आठ व्रज, नन्दिनीपिता और सालिहीपिता के पास चार व्रज थे[2] अर्थात् प्रत्येक श्रावक के पास पशु धन था, जिसे वह व्यापारिक कार्यों के लिये प्रयोग में लाते थे।

(ञ) पूंजी

व्यापार से प्राप्त धन पूंजी है। उपासकदशांगसूत्र में प्रत्येक श्रावक के पास प्रचुर सम्पत्ति थी। आनन्द श्रावक के पास चार करोड़ स्वर्ण खजाने में, चार करोड़ व्यापार में और चार करोड़ घर के वैभव में लगा हुआ था।[3] इसी प्रकार सभी श्रावकों के पास पूंजी व धन सम्पत्ति थी।

1. सिक्का

वस्तु विनिमय तो उस काल में होता ही था, साथ ही सिक्कों का भी प्रचलन था। उसमें प्रमुख सिक्के थे–कार्षापण, (रुपया), विशोपक (रुपये का 20वां भाग), काकिणी (तांबे का सबसे छोटा सिक्का), कौडी (बीस कौड़ियों का एक काकिणणी), सुवर्ण माषक (छोटा सिक्का)।

उपासकदशांगसूत्र में सिक्कों का उल्लेख न होकर मुद्राओं का उल्लेख है। वह मुद्राएं हिरण्य, सुवर्ण और कांस्य ही हुआ करती थीं। आनन्द श्रावक के पास चार करोड़ का सुवर्ण खजाने में सुरक्षित था।[4] महाशतक श्रावक के पास कांस्य सहित आठ करोड़ सुवर्ण मुद्राएं कोष में थीं।[5] इस प्रकार उपासकदशांगसूत्र में सिक्के के रूप में मुद्राओं का उल्लेख है।

1. उपा०सू० 1/4
2. वही, 2/2
3. वही, 1/4
4. वही, 1/4
5. वही, 8/228

2. उधार

उपासकदशांगसूत्र में श्रावक के व्रतों के अतिचारों के वर्णन से ज्ञात होता है कि उस समय उधार लेने एवं उधार देने की प्रवृत्ति का भी प्रचलन था। 'कूटलेखकरण' पद दर्शाता है कि मुद्राओं को उधार में लेते समय कूटलेख लिखवा लिये जाते थे।[1]

(ट) माप-तोल

आगम साहित्य में माप-तोल के लिये पांच प्रकारों का उल्लेख मिलता है। ये प्रकार हैं–1. मान, 2. उन्मान, 3. अवमान, 4. गणिम और 5. प्रतिमान।[2]

दूरी मापने के लिये अंगुल, वितस्ति, रत्नि, कुक्षि, धनुष एवं गव्यूति का प्रयोग किया जाता था। लम्बाई मापने के लिये परमाणु, रथरेणु, त्रसरेणु, बालाग्र, लिक्षा, यूका एवं यव को उपयोग में लाया जाता था। समय मापने के लिये आवलिका, श्वासोच्छ्वास स्तोक, लव, मुहूर्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋत, वर्ष अयन, संवत्सर, युग और वर्षशत से लेकर शीर्ष प्रहेलिका का प्रयोग किया जाता था।[3]

उपासकदशांगसूत्र में अस्तेयव्रत के अतिचार में कूट तुला और कूटमान का उल्लेख किया गया है, जिससे पता चलता है कि उस समय नाप (माप) तोल के लेन-देन में छल कपट विद्यमान था।[4]

(ठ) खान-खान

1. शाक-सब्जियों का प्रयोग

जैनदर्शन में निम्न चार प्रकार के खाद्य पदार्थों का उल्लेख आता है–असण, पाण, खादिम और स्वादिम[5] आनन्द श्रावक के प्रकरण में भोज्य एवं पेय पदार्थों में घेवर, खाजे, कलम जाति के चावल, मटर, मूंग एवं उड़द की दाल तथा गोघृत, सब्जियों में बथुआ, लौकी, सुधा सुआ पालक और भिंडी, पालंग, माधुरक, पेय पदार्थ में आकाश से गिरा पानी, कांजी, बड़े, खटाई में पड़े मूंग दाल के पकौड़े आदि

1. उपा०सू० 1/43
2. भगवान् महावीर : एक अनुशीलन, पृ० 76
3. वही, पृ० 367
4. उपा०सू० 1/43
5. दशवै० 4/6

व्यञ्जनों को ग्रहण को ग्रहण करता था और अन्य सभी खाद्य पदार्थों का उसको त्याग था।[1]

2. मांस प्रयोग

उस समय मांस का भी प्रचलन था जिसके खाने का शास्त्रों में निषेध किया गया है। उपासकदशांगसूत्र में श्रावक महाशतक की पत्नी रेवती मद्य-मांस लोलुपी थी। वह लोहे की सलाखों पर सेके, घी आदि में तले हुए और आग में भुने हुए बहुत प्रकार के मांस अथवा सुरादि का रसा-स्वादन करती थी। जब श्रेणिक ने राज्य में अमारि की घोषणा कर दी, तो वह अपने पीहर के नौकरों से प्रतिदिन दो-दो बछड़े मंगावर उनका मांस खाती थी।[2]

जैनागमों में मांस को तलकर, भूनकर, सुखाकर एवं नमक मिलाकर उससे तैयार व्यञ्जनों को खाने के बहुत से उल्लेख मिलते हैं। ऐसे भोज का भी उल्लेख मिलता है, जहाँ जीवों को मारकर उनका मांस पकाकर अतिथियों को परोसा जाता था परन्तु जैन परम्परा में इस प्रकार के भोजन कठोरता से निषेध मिलता है।[3]

3. मद्यप्रयोग

तत्कालीन समाज में मदिरा पान भी जाता था। जैन आगमों में मदिरा पीने-पिलाने तथा राजा-महाराजाओं के सत्कार के लिये उपयोग में लाने के प्रसंग मिलते हैं।[4]

उपासकदशांगसूत्र में जिन 15 कर्मादानों का उल्लेख किया गया है, उसमें श्रावक को 'रसवणिज्जे'[5] की मनाही गई है। रसवणिज्जे का अर्थ टीकाकारों ने मदिरा आदि के रसों का परिमाण बतलाया है। मदिरा के शौकीन पुरुषों के साथ-साथ सम्पन्न घरों की स्त्रियाँ भी मदिरापान करती थीं। महाशतक श्रावक की पत्नी रेवती मदिरापान करती थी और नशे में उन्मत रहती थी। विपाकसूत्र में वर्णन आता है कि स्त्रियों की सुरा, मधु मेरकय, मद्य, प्रशन्ना आदि मदिराओं से दोहद पूर्ति होती थी।[6]

---

1. उपा०सू० 1/30-36
2. वही, 7/240
3. जैन आ०सा०भा०स०, पृ० 209
4. ज्ञाता०सू० 16/112
5. उपा०सू० 1/47
6. विपाकसू० 1/3/13

5. रोग एवं चिकित्सा पद्धति

जैन मान्यतानुसार मानव-शरीर में साढ़े तीन करोड़ रोम होते हैं और प्रत्येक रोम में पौने दो-दो रोग छिपे होते हैं।

उपासकदशांगसूत्र में सुरादेव श्रावक के प्रकरण में 16 प्रमुख रोगों की गणना की गई है। वे रोग हैं-श्वास, कास (खांसी), ज्वर, दाह, कुक्षिशूल, भगन्दर, अर्श, बवासीर, अजीर्ण, दृष्टिशूल, मस्तक शूल, अरोचक, अक्षिवेदना, कर्णवेदना, खुजली, जलोदर और कुष्ठ रोग।[1] आठवें अध्ययन में भी पत्नी रेवती के दुर्व्यवहार पर क्रोधित होते हुए अवधिज्ञान द्वारा जान कर महाशतक श्रावक ने कहा-रेवती। तूं अलसक नामक रोग से पीड़ित होकर सात दिन के अन्दर धर्म को प्राप्त हो जावेगी।[2] इस बात के लिये उसे बाद में प्रायश्चित्त भी करना पड़ा।

रोगों का निदान भी किया जाता था। भारत में अनेक चिकित्सा पद्धतियाँ उस समय विद्यमान थी जिसमें आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति सर्वमान्य थी। आयुर्वेदशास्त्र के प्रमुख चार अंग शास्त्रों में मिलते हैं। वे हैं-वैद्य, रोगी, औषधि एवं प्रतिचर्या।[3]

(ढ) वस्त्र-आभूषण

लोग सुन्दर वस्त्र धारण करते थे। अनेक प्रकार के वस्त्रों का उपयोग उस समय होता था। सभा में जाने के लिये शुद्ध एवं शुक्ल वस्त्रों के धारण करने का उल्लेख भी मिलता है।[4]

उपासकदशांगसूत्र में वर्णन आता है कि आनन्द श्रावक ने श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का दूतिपलाश दैत्य में आगमन सुनकर शुद्ध तथा सभा योग्य मांगलिक वस्त्र पहने थे।[5] उपभोग-परिभोग परिमाणव्रत के अन्तर्गत आनन्द श्रावक ने वस्त्र विधि का परिमाण किया कि सूती दो वस्त्रों के सिवाय मैं अन्य वस्त्रों का परित्याग करता हूँ।[6] आनन्द श्रावक ने भीगे शरीर को पोंछने के लिये अंगौछे (तौलिए) का भी परिमाण किया कि मैं सुगन्धित और लाल रंग के अंगौछे के अतिरिक्त सभी अंगौछे रूप परिग्रह का परित्याग करता हूँ।[7]

1. उपा०सू० 4/152
2. वही, 8/255
3. उत्तरा० 20/23
4. वृहत्क० 5/6035
5. उवा०सू० 1/10
6. वही, 1/28
7. वही, 1/22

उस समय लोगों में आभूषण ग्रहण करने की भी रुचि थी। जैन श्रावक धनाढय थे, अत: मुख्य रूप से सोने-चांदी के आभूषण बनाए जाते थे। बड़े लोग संख्या में कम पर बहुमूल्य आभूषण पहनते थे। चौदह प्रकार के आभूषणों का वर्णन है, जिसमें हार, अर्धहार, एकावली, कनकावली और रत्नावली प्रमुख थे।[1]

उपासकदशांगसूत्र में आनन्द श्रावक ने धर्म सभा में जाने के लिये बहुमूल्य आभरणों से शरीर को अलंकृत किया।[2] पुरुषों में अंगूठी पहनने का विशेष रिवाज था। आनन्द ने अपनी नामाङ्कित अंगूठी के रूप में आभूषण-परिमाण किया था और साथ ही शुद्ध सोने के अचित्रित सादे कुण्डल के सिवाय अन्य सब आभूषणों का परित्याग कर दिया था।[3]

रथ में जोते जाने वाले बैलों को भी बड़े लोग सोने-चाँदी से सजवाते थे। चांदी की घंटियाँ गले में बांधते थे। प्रथम अध्ययन में आनन्द श्रावक की पत्नी शिवानन्दा[4] एवं सद्दालपुत्र की पत्नी अग्निमित्रा[5] के जहाँ धार्मिक यान का वर्णन आता है, वहाँ वह पूर्णत: स्पष्ट हो जाता है कि रथ व बैलों को विभिन्न आभूषणों से अलंकृत किया गया था।

(ण) सौन्दर्य प्रसाधन एवं सुगन्धित द्रव्य

मानव मन का स्वभाव है कि वह हर आयु में सुन्दर दिखाई देना चाहता है, इसी भावना ने सौन्दर्य प्रसाधनों को जन्म दिया।

जैन दर्शन में श्रमणों को शृंगार की दृष्टि से स्नान तक करने का निषेध किया गया है।[6] श्रावकों को भी राग बढ़ाने वाले प्रसाधनों का निषेध किया गया है। फिर भी आगम ग्रन्थों में आता है कि गन्धमाल्य, विलेपन और स्नान आदि प्रसाधन के लिये किया जाता था।[7]

सुगन्धित द्रव्य एवं सौन्दर्य प्रसाधनों में आनन्द श्रावक ने धूपविधि का परिमाण करते हुए अगरू, लोहान और धूप के सिवाय सभी धूपनीय वस्तुओं का प्रत्याख्यान

1. जैन आ०सा०भा०स०, पृ० 142
2. उपा०सू० 1/10
3. वही, 1/34
4. उपा०सू० 1/59
5. वही, 7/206
6. दशवै०सू० 3/2
7. उत्तरा० 20/29

किया था।[1] सहस्रपाक और शतपाक मालिश के तेलों के अतिरिक्त सभी प्रकार के मालिश के तेलों का भी परित्याग उसे था।[2] मुखवास विधि में पाँच सुगन्धित वस्तुओं से युक्त पान के सिवाय सब सुगन्धित वस्तुओं का उसने उपभोग करना सदा के लिये छोड़ दिया था।[3]

इनके अतिरिक्त भी आनन्द श्रावक ने अमरू, कुमकुम और चन्दन के अतिरिक्त विलेपन द्रव्यों का[4] और उबटन में गेहूँ के औ से बने सगुन्धित उबटन के अतिरिक्त अन्य सब उबटनों के प्रयोग का प्रत्याख्यान किया था।[5] सौन्दर्य प्रसाधनों के अन्तर्गत पुष्प विधि का परिमाण करते हुए उसने श्वेत कमल और मालती के फूलों की माला के सिवाय अन्य सभी प्रकार के फूलों को धारण करने का परित्याग कर दिया था।[6] इस प्रकार पाया जाता है कि उपासकदशांगसूत्र के समकालीन सौन्दर्य प्रसाान के अनेक सुगन्धित पदार्थ विद्यमान थे।

(त) मनोरंजन के साधन

उस समय मानव अनेक प्रकार के मन बहलाव करने वाले साधनों से मनोरंजन किया करता था। नट् विद्या का प्रचुर प्रचार था, नाट्य मण्डलियाँ स्थान-स्थान पर घूमा करती थीं। उन दिनों शतरंज भी खेला जाता था।[7]

उपासकदशांगसूत्र में दर्शाया गया है कि वाणिज्यग्राम के बाहर उत्तरपूर्व में कोल्लाक सन्निवेश में लोगों के मनोरंजन के लिये भरपूर साधन थे। नाट्य दिखाने वाले, नाचने वोला, रस्सी आदि पर चढ़कर कला दिखाने वाले, पहलवान, मुक्के बाज, मसखरे, कथा करने वाले, तैरने वाले, चित्रपट दिखाने वालो, तन्तु-वाद्य बजाकर आजीविका करने वाले, ताली बजाकर मनोविनोद करने वाले साधन उस नगरी में मौजूद थे, जिनसे मनोरंजन होता था।[8] अत: प्राचीनकाल से ही मानव के लिये मनोरंजन के विविध संसाधन उपलब्ध होते रहे हैं, ऐसा उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट हो जाता है।

1. उपा०सू० 1/34-35
2. वही, 1/25
3. वही, 1/38
4. उपा०सू० 1/29
5. वही, 1/26
6. वही, 1/33
7. दशवै० 3/4
8. उपा०सू० 1/7

(थ) भौगोलिक परिचय

(क) ग्राम एवं नगर

उपासकदशांगसूत्र में नगरों, उपनगरों, चैत्यों, उद्यानों तथा पोषधशाला आदि की विस्तृत जानकारी नहीं मिलती। केवल इनके नाम का उल्लेख मात्र किया गया है। सूत्र में 8 नगरों का वर्णन मिलता है। वे नगर हैं–चम्पा, वाणिज्यग्राम, वाराणसी, आलम्भिया, काम्पिल्यपुर, पोलासपुर, राजगृह एवं श्रावस्ती। इनकी विशेष जानकारी निम्न प्रकार है–

1. चम्पा

प्रथम अध्ययन आनन्द उपासक में चम्पा नगरी का उल्लेख प्राप्त होता है कि जम्बूस्वामी द्वारा पूछने पर आर्य सुधर्मा स्वामी ने चंपा नगरी में ही उपासकदशांगसूत्र के भाव फरमाये थे।[1] द्वितीय अध्ययन में कामदेव उपासक (श्रावक) चम्पा नगरी का निवासी था।[2] यह चम्पा नगरी पहले अंग देश की राजधानी थी। स्थानांगसूत्र में वर्णित प्रसिद्ध एवं समृद्ध दश नगरियों में चम्पा का भी नामोल्लेख प्राप्त होता है।[3]

चम्पानगरी बहुत ही समृद्ध, वैभवशाली एवं सुरक्षित थी। इसमें विशाल जनसमूह निवास करता था। चम्पा नगरी के चारों ओर भूमि उर्वरा थी। सभी प्रकार के धान्य एवं अन्न प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होते थे। यह व्यापार का मुख्य केन्द्र थी और दूर-दूर से व्यापारी यहाँ व्यापारार्थ आया करते थे तथा चम्पा के व्यापारी भी माल लेकर मिथिला, अहिच्छत्रा और पिहुंड आदि में व्यापारार्थ जाते थे।[4]

वर्तमान में भागलपुर से ठीक 2-4 मील पर पत्थर घाट है। इसके पास ही पश्चिम दिशा की ओर चम्पानगर नाम का एक बड़ा गांव है और एक छोटा गांव भी है, जिसे चम्पापुर कहा जाता है, यही पूर्व की चम्पा नगरी थी।[5] वर्तमान में इसे नाथ नगर से भी जाना जाता है।

2. वाणिज्यग्राम

आनन्द श्रावक वाणिजयग्राम के रहने वाले थे।[6] भगवान् महावीर स्वामी

1. उपा०सू० 1/1
2. वही, 2/2
3. स्था०सू० 10/717
4. ज्ञाता० सू०, 8 पृ० 241 तथा उत्तरा० 21/2
5. उपा०सू० 1/3
6. उपा०सू० 1/3

अपने 15 में वर्षावास के लिये वाणिज्यग्राम आए और गाथापति आनन्द को श्रावक धर्म में दीक्षित किया।[1] यह राजा चेटक की राजधानी वैशाली के सन्निकट गंडकी नदी के दक्षिण तट पर स्थित था। उस युग में वह व्यापार का मुख्य केन्द्र था। अब भी इसका नाम बनिया गांव है, जो बसाड़पट्टी नामक स्थान के समीप है, यही प्राचीन वाणिज्यग्राम है।

3. वाराणसी

श्रावक चुलनी पिता और सुरादेव वाराणसी के निवासी थे। भगवान् महावीर ने अपना 18वां चातुर्मास वाराणसी में बिताया था और चुलनीपिता और सुरादेव को श्रावक भी बनाया था।[2]

वाराणसी काशी जनपद की राजधानी थी। यह नगर 'बरना' और 'असी'–इन दो नदियों के बीच में स्थित था, इसलिये इसका नाम वाराणसी पड़ा। इसका आधुनिक नाम बनारस भी है, जो गङ्गा के पश्चिमी तट पर बसा हुआ है और आज भी शिक्षा का प्रमुख केन्द्र है।

4. आलम्भिया

आलम्भिया नगरी में श्रावक चुल्लशतक निवास करता था। भगवान् महावीर का 8वां चातुर्मास आलम्भिया नगरी में व्यतीत हुआ था। यहीं चुल्लशतक को धर्मोपदेश देकर श्रावक भी बनाया गया था। आलम्भिया नाम जनपद और नगर दोनों के लिये मिलता है। आलम्भिया नगर आलम्भिया जनपद की राजधानी थी। यह श्रावस्ती से 30 योजन और राजगृह से 12 योजन दूरी पर स्थित थी। इससे सिद्ध होता है कि यह श्रावस्ती और राजगृह के मध्य रही होगी। कनिङ्घम और हार्नले ने आलंभिया नगरी उत्तरप्रदेश के उन्नाव जिले के नावाल स्थान के पास बतलाई है परन्तु नन्दलाल डे का मत है कि इटावा से 27 मील उत्तर पूर्व में स्थित अविवा नामक स्थान ही आलम्भिया है।[3]

5. काम्पिल्यपुर

भगवान् महावीर स्वामी ने अपने 21वें चातुर्मास में, जो उन्होंने काम्पिल्यपुर में

1. उपा०सू०, पृ० 388
2. वही, पृ० 388
3. उपा०सू०, पृ० 387

किया था, कुण्डकौलिक को अपना अनुयायी बनाया था। जम्बूद्वीप से दक्षिण भरत खण्ड की पूर्व दिशा में पांचाल देश के कंपिल नाम नगरी गंगा के किनारे अवस्थित थी। महाभारत में भी इस नगरी का उल्लेख मिलता है।[1] यह नगर उन दिनों व्यापार का केन्द्र था। ज्ञाताधर्मकथासूत्र में राजा द्रुपद का काम्पिल्यपुर में होने का उल्लेख मिलता है।[2]

कनिंघम ने काम्पिल्य को उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद जिले में फतेहगढ़ से 28 मील दूर उत्तर-पूर्व गंगा के समीप में स्थित माना है।[3] कायमगंज रेलवे स्टेशन से यह केवल छह मील दूर है।

अपने समय में काम्पिल्य नगरी सोलह राजधानियों में से एक प्रमुख नगरी रही है। इसका कपिल ऋषि से भी सम्बन्ध बतलाया जाता है साथ ही तेरहवें तीर्थंकर विमलनाथ की जन्म स्थली भी इसे माना जाता है। इसे शूकर क्षेत्र में भी जाना जाता था।

6. पोलासपुर

सातवें अध्ययन में शकडालपुत्र पोलासपुर नगर में निवास करता था।[4] जब श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने अपना 21वां चातुर्मास पोलासपुर में किया, तब शकडालपुत्र ने श्रावक व्रत अंगीकार किये। पालि साहित्य में इसका नाम पलासपुर मिलता है।[5] अन्तकृद्दशांगसूत्र में भी पोलासपुर का उल्लेख मिलता है।[6]

7. राजगृह

श्रावक महाशतक राजगृह के निवासी थे। यहाँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने 20 चातुर्मास किये थे।[7]

---

1. महा०आदि० 137/73, उद्योग० 189/13 एवं शान्ति 139/5
2. ज्ञाता०सू०, 16/81
3. भगवान महावीर : एक अनुशीलन, पृ० 45
4. उपा०सू० 7/177
5. उपा०सू०, पृ० 357
6. अन्तकृ० 5/123
7. (क) कल्प० 5/123
   (ख) व्याख्याप्र० 1/1/4

राजगृह प्राचीन काल से ही प्रसिद्ध एवं समृद्ध नगरी रही है। यहाँ का राजा श्रेणिक भगवान् महावीर का अनन्य भक्त था।

राजगृह नगर विशाल मगध साम्राज्य की राजधानी थी। मगध का साम्राज्य शक्ति, सम्पन्नता, समृद्धि एवं सैन्यबल आदि की दृष्टि से वैभवपूर्ण स्थान रहा है। राजगृह को पंच पहाड़ियों से सुरक्षित माना गया है, अतः इसे गिरिव्रज भी कहते हैं। यह स्थान आज भी सुरक्षित है और राजगृह के नाम से जाना जाता है।[1] जैन मतावलम्बियों का यह आज भी श्रद्धा का केन्द्र है।

वर्तमान राजगृह विहारप्रान्त में पटना से पूर्व और गया से पूर्वोत्तर में स्थित है। यह पटना से 70 मील और नालन्दा से 8 मील है।[2]

8. श्रावस्ती

श्रावक नन्दिनीपिता और सालीहिपिता श्रावस्ती के निवासी थे। कौशल राज्य की राजधानी थी। इसकी आधुनिक पहचान सहेट-महेट से की गई है।

यह नगरी अचिरावती (राप्ती) नदी के तट पर बसी थी। यह जैन और बौद्ध संस्कृति का केन्द्र बिन्दु रहा है। उत्तराध्ययनसूत्र में उल्लिखित केशी-गौतम संवाद श्रावस्ती में हुआ था।[3]

यह स्थान उत्तर पूर्वीय रेलवे के बलरामपुर स्टेशन से जो सड़क जाती है, उससे दस मील दूर है। बहराईच से यह 29 मील पर अवस्थित है।[4] अपने समय में यह नगरी विपुल सम्पदासम्पन्न थीं। देश-विदेश के व्यापारियों की यह पड़ाव स्थली थी।

9. उपनगर : कोल्लाक सन्निवेश

प्रथम अध्ययन में वर्णित आनन्द श्रावक के सवजन-सम्बन्धी कोल्लाक सन्निवेश में निवास करते थे।[5] यह सन्निवेश (उपनगर) वाणिज्यग्राम के बाहर ईशान कोण में स्थित था। वह धनधान्य से सम्पन्न, तस्कर आदि के उपद्रवों से रहित, मनोहर, दर्शनीय, अभिरूप एवं प्रतिरूप था।

---

1. कुवलय०, पृ० 70
2. उपा०सू०, पृ० 389
3. उत्तरा०सू० 23/3
4. भगवान महावीर : एक अनुशीलन, पृ० 85
5. उपा०सू० 1/8

कोल्लाक नाम के दो सन्निवेश हैं। एक वैशाली के सन्निकट और दूसरा राजगृह के सन्निकट। वैशाली के सन्निकट जो कोल्लाक सन्निवेश था, वही वर्तमान में बसाढ़ से उत्तर पश्चिम में दो मील पर कोल्हुआ है।[1]

(द) चैत्य और उद्यान

उपासकदशांगसूत्र में नगरों के वर्णन के साथ-साथ चैत्य और उद्यानों का वर्णन भी प्राप्त होता है। उपासकदशांगसूत्र में क्रमानुसार चम्पा नगरी के बाहर पूर्णभद्रचैत्य,[2] वाणिज्यग्राम के बाहर दूतिपलाशचैत्य,[3] और वाराणसी[4] तथा श्रावस्ती के बाहर कोष्ठक चैत्य था। वनों का भी उल्लेख उपासकदशांगसूत्र में वर्णित है। आलंभिया के बाहर शंखवन,[5] काम्पिल्यपुर[6] और पोलासपुर[7] के बाहर सहस्राम्र वन और राजगृह के बाहर गुणशील उद्यान[8] था।

(ध) पौषधशाला

ध्यान, चिन्तन, मनन और आराधना के लिये शान्त स्थान चाहिये। इसलिये श्रावक विशेष उपासना के लिये पौषधशालाओं का प्रयोग करते थे। छठे और सातवें अध्ययन में कुण्डकौलिक और सद्दालपुत्र द्वारा अपनी अशोक वाटिका में जाकर धर्मोपासना करने का उल्लेख है। उपासकदशांगसूत्र में। शेष सभी श्रावक ध्यान एवं उपासना के लिये पौषधशाला में ही जाते थे।

(न) उपासक दशांग में वर्णित अन्य धार्मिक मत

तत्कालीन समाज में महावीर विषयक मत ही नहीं, अन्य धार्मिक मत भी प्रचलित थे। आनन्द श्रावक द्वारा भगवान् महावीर स्वामी के समक्ष की गई प्रतिज्ञा से इस बात की पुष्टि हो जाती है। जब आनन्द श्रावक व्रतों के अंगीकार कर लेने के

1. भगवान् महावीर : एक अनुशीलन, पृ० 49
2. उपा०सू० 1/2, 2/90, 1/3
3. उपा०सू० 3/124, 4/150
4. वही, 9/269, 10/273
5. वही, 5/155
6. वही, 6/163
7. वही, 7/178
8. उपा०सू० 8/229

उपरान्त भगवान् से कहते हैं कि आज से मैं निर्ग्रन्थ धर्म (जैन धर्म) से इतर संघ वालों को, अन्ययूथिक देवों को, अन्ययूथिकों द्वारा परिगृहीत चैत्यों को वन्दना नमस्कार नहीं करूंगा, उन्हें गुरुबुद्धि से अशन-पाना-खाद्य-स्वादम नहीं दूंगा। यहाँ अन्ययूथिक से अभिप्राय अन्य धार्मिकमतावलम्बियों से है। आजीवक मत भी उस समय प्रचलित था। कुण्डकौलिक और शकडालपुत्र के प्रकरण से इस बात की पुष्टि होती है।

विशिष्ट व्यक्तियों का परिचय

1. भगवान् महावीर स्वामी

23वें तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ के परिनिर्वाण के 250 वर्ष पश्चात भगवान् महावीर स्वामी का चौबीसवें तीर्थङ्कर के रूप में जम्बूद्वीप में जन्म हुआ।

लघुत्रिषष्टिशलाका में आता है कि श्रमण भगवान् महावीर के गर्भ में आते ही राज्य में धन धान्य आदि में वृद्धि होनो से इनका 'वर्धमान' नाम होगा-ऐसा पहले ही निश्चित हो गया था।[1] भगवान् महावीर का जन्म ईसा से 500 वर्ष पूर्व चैत्र सुदी त्रयोदशी को पूर्व क्षत्रिय कुण्डलग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम सिद्धार्थ और माता का नाम रानी त्रिशला था। त्रिषष्टिशालाकापुरुष में बतलाया गया है कि भगवान् के जन्म के समय छप्पन दिक्-कुमारियों ने सोल्लास उनका जन्मोत्सव मनाया था और सूतिकर्म भी किया था।[2]

जन्म से ही वर्धमान मति, श्रुत एवं अवधिज्ञान के धारी थे तथा वे अतुल बलशाली थे। उनके बल के विषय में बताया गया है कि अनन्त इन्द्रों का बल तीर्थङ्कर की एक कनिष्ठ अंगुलि में होता है। उनके बल की तुलना किसी के बल से नहीं की जा सकती।[3]

1. धनधान्यादिभिर्वृद्धं जज्ञे ज्ञातकुलं तदा।
   प्रभौ गर्भस्थिते नाम वर्धमानेति निश्चितम्।।
   -लघु० 306
2. षट्पञ्चाशद्दिक्कुमार्योऽभ्येत्य भोगंकरादयः।
   स्वामिन स्वामिमातुश्च सूतिकर्माणि चक्रिरे।।
   -त्रिषष्टि० 10/2/52
3. (क) आ०औ०त्रि०, पृ० 147
   (ख) जै०ध०मौ०इ०, पृ० 346